3. योगचूडामणि उपनिषद्

उपनिषद् परिचय : योगचूर्णामणि उपनिषद् को कैवल्य प्रदायक बताते हुए इस उपनिषद् का प्रारम्भ होता है। इस उपनिषद् में कुल 121 मंत्र हैं। इसके अनुसार योग के 6 अंग है। आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि है। इस उपनिषद् में चक्रों, पंचप्राणों, पंचउपप्राणों, अजपा गायत्री आदि को विस्तार पूर्वक प्रतिपादन किया गया है। इस उपनिषद् के अनुसार ब्रह्मचारी और मिताहारी योगी एक वर्ष के योगाभ्यास से योग में सिद्धि प्राप्त कर लेता है। जो योगी महामुद्रा, नभोमुद्रा, उड्डियान बंध, जलंधर बंध और मूलबंध को जानता है, वह मुक्ति को प्राप्त करता है। खेचरी मुद्रा के महत्व को बताते हुए कहा गया है कि जब तक साधक खेचरी मुद्रा को स्थापित किये है, तब तक बिन्दुपात नहीं हो सकता और जब तक शरीर में बिन्दु स्थित है, तब तक मृत्यु का भय कैसा।

इस प्रकार योग के 6 अंगों के साथ–साथ अन्य योग के प्रमुख 7 तत्वों पर चर्चा करते हुए विषय को पूर्णता प्रदान की गयी।

योग के 6 अंग और उनके लाभ :

1. आसन – रोगों का हनन
2. प्राणायाम – पापों का विनाश
3. प्रत्याहार – मानसिक विकार का समापन
4. धारणा – धैर्यवान
5. ध्यान – समाधि की प्राप्ति
6. समाधि – जीव के शुभ–अशुभ कर्मों का समापन और मुक्ति

1. **आसन** : आसन के दो भेद सिद्धासन और पद्मासन है।
2. **प्राणायाम** : इस उपनिषद् में प्राणायाम की विधि बताते हुए कहा गया हैः

कृत्वा संपुटितौ करौ दृढतरं बध्वा तु पद्मासनं गाढं वक्षसि संनिधाय चुबुकं ध्यानं च तच्चेष्टितम्।
वारंवारमपानमूर्ध्वमनिलं प्रोच्चारयेत्पूरितं मुञ्चन्प्राणमुपैति बोधमतुलं शक्तिप्रभावान्नरः।।

योगचूडामणि उपनिषद् 40

अर्थात् दृढ़ता पूर्वक पद्मासन करके हाथों को गोदी में ऊपर नीचे रखें। सिर को नीचा करके ठोड़ी को छाती से लगाकर ब्रह्म में ध्यान एकाग्रचित्त कर श्वास को बार–बार भीतर खींचे और बाहर निष्कासित करें। प्राणवायु को अन्दर और बाहर निष्कासित करें। प्राणवायु को अन्दर और अपानवायु को ऊपर करें। इस प्रकार से प्राणायाम के अभ्यास द्वारा अतुल शक्ति की अनुभूति होती है।

प्राणायाम के अभ्यास से निकलने वाले पसीने को शरीर में ही मलने का परामर्श दिया गया है। साथ ही अभ्यासी को नमकीन, खट्टे, कड़वे पादार्थों का परित्याग एवं दूध और इससे निर्मित आहार का विशेषरूप से सेवन करना चाहिए। ब्रह्मचारी और मिताहारी योग साधक एक वर्ष में योग को सिद्ध कर लेता है। इसमें कोई संदेह नहीं है।

मिताहार : ईश्वर को समर्पित करते हुए आधा पेट मधुर और स्निग्ध आहार करना चाहिए तथा चौथाई भाग जल और चौथाई भाग वायु के लिए खाली रखना चाहिए।

प्राणायाम के लाभ :

1. जब तक वायु स्थिर नहीं होगी तब तक बिन्दु चलायमान रहेगा। अतः वायु की स्थिरता के लिए प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।
2. ब्रह्म भी अल्पकाल के भय से मुक्ति हेतु प्राणायाम का अभ्यास करते हैं। अतः प्राण का निरोध करने के लिए प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।
3. प्राणायाम के द्वारा नाड़ी शुद्धि होने पर प्राण का निरोध हो जाता है।
4. संसार सागर से मुक्ति प्राप्त करने के लिए यह प्राणायाम सेतु के समान है।
5. योगियों के मतानुसार प्राणायाम पापरूपी ईधन को अग्नि के समान जलाने वाला है।
6. प्राणायाम का विधि पूर्वक अभ्यास सभी प्रकार के रोगों को नष्ट कर देता है और प्राणायाम का अभ्यास न होने पर यह शरीर सभी प्रकार के रोगों का उत्पत्ति स्थल बना रहता है।

अभ्यास विधि : योगी बद्धपद्मासन लगाकर चन्द्रनाड़ी से वायु धारण कर देर कुम्भक करें। तदोपरान्त सूर्य नाड़ी से निष्कासित कर दे। पुनः इसके विपरीत करें। इस प्रकार के अभ्यास से दो माह में नाड़ियों की शुद्धि हो जाती है। नाड़ी शोधन प्राणायाम करने से नाड़ियों की शुद्धि और वायु धारण की क्षमता प्राप्त हो जाती है तथा अरोग्य लाभ, प्रबल जठराग्नि और दिव्य नाद श्रवण होने लगता है। प्राणायाम की तीन क्रियाएं पूरक, रेचक और कुम्भक साक्षात् प्रणवरूप हैं। अतः इस चिन्तन के साथ द्वादस मात्राओं से युक्त प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

इस उपनिषद् में 12, 24 और 36 मात्राओं से युक्त प्राणायाम को क्रमशः अधम, मध्यम और उत्तम कोटि का बताया गया है। ये तीनों प्राणायाम के लक्षण क्रमशः पसीना आना, कम्पन्न होना और आसन से ऊपर उठना है।

साधक को एकान्त में बद्धपद्मासन लगाकर शिवरूप गुरु को प्रणाम कर नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि टिकाकर प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

प्राणायाम के अभ्यास में सावधानियां : वायु विकृत होने पर खाँसी, श्वास, हिचकी, सिर, कान और आंख में पीड़ा तथा नाना प्रकार के रोगों की उत्पत्ति होती है। अतः प्राणायाम के अभ्यास में विशेष रूप से सावधानी बरतनी चाहिए। जिस प्रकार हाथी, सिंह आदि हिंसक पशुओं को धीरे–धीरे वश में किया जाता है, उसी प्रकार प्राणायाम के अभ्यास से भी धीरे–धीरे प्राणवायु को वश में करना चाहिए। अन्यथा ये अभ्यासी का विनाश कर देते हैं।

3. **प्रत्याहार** : इन्द्रियों को उनके विषयों की ओर से भागने से रोकना प्रत्याहार कहलाता है।
4. **धारणा** : धारणा के योगी का मन धैर्यवान बनता है।
5. **ध्यान** : धारणा की द्वादस आवृत्ति पर ध्यान का प्रादुर्भाव होता है।
6. **समाधि** : समाधि के द्वारा जीव के शुभ और अशुभ कर्म समाप्त होकर उसे मुक्ति मिल जाती है।

4. त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद्

परिचय : इस उपनिषद् में ब्रह्मप्राप्ति के उपाय के रूप में अष्टांगयोग का मुख्यरूप से प्रतिपादन त्रिषिखी नामक ब्राह्मण और भगवान आदित्य के मध्य संवाद के द्वारा हुआ है। उपनिषद् के मुख्य विषय ब्रह्म, सृष्टि की उत्पत्ति, जड़–चेतन विश्व की सृष्टि, कर्म एवं ज्ञानयोग, ब्रह्मज्ञान का उपाय अष्टांगयोग, दस यम एवं दस नियम, नाड़ी शोधन, प्राणायाम के विविध प्रकार आदि हैं।

इस उपनिषद् में ब्रह्म जीव रूप को कैसे प्राप्त होता है? के उत्तर में कहा गया है :

अहंकाराभिमनेन जीवः स्याद्धि सदाशिवः स चाविवेकप्रकृतिसंगत्या तत्र मुह्यते।

त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् 1/2/16

अर्थात् सदाशिव अर्थात् ब्रह्म जब अहंकार रूप अभिमान से ग्रस्त हो जाता है तब वही जीव की श्रेणी में गमन करने लगता है। जीव पुनः योग मार्ग का अनुशरण कर अपने मूल स्वरूप को प्राप्त करता है। इस उपनिषद् में योग के दो मार्गों का उल्लेख किया गया हैः

1. ज्ञानयोग 2. कर्मयोग

1. **ज्ञानयोग** : ''चित्त को सर्वथा आत्मिक उत्थान में नियोजित किये रखना ज्ञानयोग कहलाता है।
2. **कर्मयोग** : ''कर्म और कर्तव्य द्वारा शास्त्रों के अनुसार कर्मों में सदैव मन को नियुक्त किये रखना कर्म योग कहलाता है।

यह उपनिषद् दो प्रकार के योगों को विकार रहित भाव से करने कर परामर्श देता है। ऐसा करने से साधक शीघ्र ही मोक्ष रूपी परम श्रेय को प्राप्त कर लेता है।

अष्टांगयोग : इस उपनिषद् में योग के आठ अंग यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि का वर्णन किया गया है।